राहुल सांकृत्यायन के ऐतिहासिक उपन्यास

डॉ. आर.पी. वर्मा,
असि. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय गोसाईखेड़ा,
जनपद–उन्नाव, उ.प्र.

ऐतिहासिक हिन्दी उपन्यासों की विकास–यात्रा में महापण्डित राहुल सांकृत्यायन के ऐतिहासिक उपन्यासों की विशिष्ट पहचान है। उन्होंने अपने प्रिय विषम इतिहास को कथा–साहित्य की रोचकता और रंजकता से आवेष्टित कर एक नया आयाम दिया है। उनके ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास–तत्व और कथात्मक कल्पना तथा भावना का जैसा विवेकपूर्ण सामंजस्य है वैसा संभवतः अन्य ऐतिहासिक उपन्यासों के लेखकों में नहीं है। जहां अन्य उपन्यासकार इतिहास–तत्व की उपेक्षा कर औपन्यासिक कल्पना के प्रति विशेष आग्रह रखते हैं वहां राहुल जी ऐतिहासिक तथ्यों की सत्यता के प्रति विशेष सावधान और सतर्क रहते हैं। यों ऐतिहासिक उपन्यास मूलतः उद्देश्यपरक ही होते हैं, चाहे उनका उद्देश्य अतीत–मोह, अतीत में वर्तमान की समस्या का उपस्थापन, राष्ट्रीय चेतना, इतिहास का पुनर्निर्माण या निजी दृष्टिकोण का प्रचार ही क्यों न हो। वस्तुतः उसका दृष्टिकोण अतीत के पीठरपाक पर अधिष्ठित जीवन द्वारा वर्तमान को अनुप्राणित करना ही होता है। साथ ही, वह इतिहास–तत्व और औपन्यासिक कल्पना के विनियोग से शाश्वत जीवन–मूल्यों का भी उद्घाटन करता है। वह अतीत के जिन चरित्रों और घटनाओं को जीवन्त बनाता है, वे प्रायः शाश्वत सत्य के संवाहक होते हैं। एक सीमा तक इतिहास भी यह कार्य करता है किन्तु इतिहासकार और उपन्यासकार की अपनी प्रतिबद्धताएं हैं, उनसे वे विलग नहीं हो सकते। इतिहासकार का भी अपना दृष्टिकोण होता है जिसके आधार पर वह अतीत तथ्य की विश्लेषणात्मक व्याख्या प्रस्तुत करता है, उपन्यासकार अपनी औपन्यासिक कल्पना से उसे केवल ध्वनित करता है। वह ऐतिहासिक विवरणों का विवेचन–विश्लेषण और व्याख्या नहीं करता है वरन् औपन्यासिक उपादानों के समवाय से विगत जीवन के सम्पूर्ण कार्य–व्यापार, आचार–विचार, रीति–नीति, मनोवृत्ति आदि को व्यक्त कर देता है। सफल ऐतिहासिक उपन्यासों में इइतहास तत्व और औपन्यासिक कल्पना इस प्रकार घुल–मिल जाते हैं कि उनके वाह्य स्वरूप में स्पष्ट विभाजक रेखा निर्धारित नहीं की जा सकती।

राहुल जी ने इन अनिवार्यताओं को स्वीकार करते हुए 'सिंह सेनापति', 'जय यौधेय' 'विस्मृत यात्री', और 'दिवोदास' ऐतिहासिक उपन्यासों का सृजन किया है। इन उपन्यासों में साम्यवादी विचारधारा, राजतंत्र का विरोध, शोषितों के प्रति सद्भाव, बौद्धधर्म के प्रति आस्था, प्रेम का उन्मुक्त वर्णन, यात्रा–वृतान्त, ऐतिहासिक तथ्यों का आग्रह आदि ऐसे तत्व सन्निहित है जो स्पष्टतः लक्षित होते हैं। इस संदर्भ में यह तथ्य स्मरणीय है कि राहुल जी ने ऐतिहासिक तथ्यों को अपने विशिष्ट जीवन–दर्शन के आधार पर ही औपन्यासिक कल्पना से संयोजित किया है।

उनके 'सिंह सेनापति' ऐतिहासिक उपन्यास में लिच्छवि कुमार सिंह के अदम्य शौर्य की गाथा है। उपन्यास की भूमिका में राहुल जी ने कथा के प्रति पाठकीय कौतूहल को जागृत करते हुए लिखा है–'छपरा जिला में भूमि की

खुदाई करते हुए उन्हें कुछ ईटें मिली थीं। इन ईटों पर ब्राम्ही अक्षरों में जो लिखा हुआ था, उसका अनुवाद 'सिंह सेनापति' है। आपको मेरी सच्चाई पर संदेह हो तो इस सोलह सौ ईटों को जाकर पटना म्यूजियम में देख लीजिए। वस्तुतः उनका यह कथन भ्रम में डालकर पाठकीय औत्सुक्य को जागृत करना मात्र है। इसी पद्धति को आगे चलकर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी अपने ऐतिहासिक उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में अपनाया है और व्योमकेश शास्त्री छद्म नाम से वक्तव्य देकर पाठकीय औत्सुक्य का संवर्धन किया है। 'सिंह सेनापति' के ऐतिहासिक विवरण डॉ0 विमलचरण के 'सम एन्शीयण्ट इण्डिया' ग्रन्थों पर आधारित है। ऐतिहासिक विवरणों को कहीं तो प्रत्यक्षतः लेखकीय टिप्पणी के रूप में व्यक्त किया गया और कहीं घटनाओं और चरित्रों के माध्यम से। इसका औपन्यासिक शिल्प विवरणात्मक ही है किन्तु नियोजित पात्रों के व्यक्तित्व, शील और चरित्र को कलात्मक रूप में उरेहा गया है। प्रमुख पात्रों में कुमार सिंह, आचार्य बहुलाश्व, कुमार कपिल तथा बाहुलाश्व पुत्री रोहिणी आदि विशेष रूप से उल्लेख्य हैं। कुमार सिंह का आकर्षक व्यक्तित्व, प्रबल इच्छाशक्ति, अदम्य साहस और प्रज्ञाशक्ति अद्भुत और विलक्षण है। इन्हीं गुणों के कारण वह नायकत्व की गरिमा से विभूषित है। उपन्यासकार ने पाश्वों और मागधों के युद्ध में उसके अपूर्व शौर्य और प्रभूत पराक्रम का परिचय आकर्षक और भव्य रूप में प्रस्तुत किया है। वह युद्ध कौशल में निपुण हैं। वह युद्ध की मर्यादाओं का पालन करते हुए अपनी चारित्रिक गरिमा और उदात्त्ता का परिचय देता है। अपनी क्षुद्र स्वार्थ–पूर्ति और अहम्मन्यता के लिए न होकर तक्षशिला और वैशाली गणराज्यों के रक्षार्थ ही प्रतीत होता है। उसके असाधारण युद्ध संचालन और रण–कौशल की प्रशंसा करते हुए गणपति का यह कथन उल्लेख्य है। 'आपको आयुष्मान् सिंह का पराक्रम विदित नहीं है। तक्षशिला के शत्रु पाश्वों को परास्त करना इन्हीं का काम है। इन्हीं के कौशल से शत्रुवाहिनीपति जीवित बचाया गया है। आज सिंह का यशोगान, उसकी वीरगाथा सारे पूर्व–पश्चिम गान्धार में गायी जाती है। ऐसे हितकारी अपने वीर सेनानी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना हमारा कर्तव्य है।'

रोहिणी और कुमार सिंह का प्रेम–प्रसंग भी उपन्यासकार की उर्वर कल्पना का अंग है। दोनों का प्रेम, त्याग और उत्सर्ग पर आधारित होकर निश्छल भाव से गतिमान होता है तथा दोनों के चारित्रिक उत्कर्ष को द्योतित करता है। रोहिणी अस्वस्थ सिंह की निःस्वार्थ भाव से सेवा ही नहीं करती वरन् युद्ध में उसके प्राणों की रक्षा भी करती है। इस प्रकार दोनों का प्रेम नैसर्गिक रूप से पल्लवित–पुष्पित होकर परिणय–सूत्र में आबद्ध होता है।

सिंह की चारित्रिक उत्कर्ष–गाथा में ही गान्धार–कुमार कपिल की कथा भी अनुस्यूत है। कपिल की चारित्रिक परिकल्पना सिंह के उत्कर्ष को ही प्रदर्शित करता है किन्तु, कपिल का उसके प्रति प्रेम भाव बड़ा ही प्राकृष्ट है। वह सहायक बनकर युद्ध में सम्मिलित होता है और अपने शौर्य का अपूर्व परिचय देते हुए उसके प्राण की रक्षा करता है।

यद्यपि विवेच्य उपन्यास में सिंह का चरित्र ही प्रीाावशाली बना रहता है और मूल कथा को गतिशील बनाता है। तथापि अन्य चरित्रों के शील–निरूपण में भी उपन्यासकार ने अतिरिक्त रंग भरने की चेष्टा की है। घटना और चरित्र में अन्विति बड़ी ही कलात्मक है। अनेक नाटकीय मोड़ लेकर घटना आगे बढ़ती है और नायक के चरित्र को उद्भासित करती है। सिंह के चरित्रोत्कर्ष द्वारा ही उपन्यासकार ने अपने उद्देश्य और मन्तव्य को दिग्दर्शित किया है। निश्चय ही, इस उपन्यास में राहुल जी ने अपने वक्तव्य के अनुरूप 'सिंह सेनापति' के समकालीन समाज को सफलता से चित्रित किया है।

'जय यौधेय' राहुल जी का सर्वाधिक लोकप्रिय उपन्यास है। इस अनुपम उपन्यास की रचना उन्होंने केवल इक्कीस दिनों में पूरी की थी। यह उनके विलक्षण प्रतिभा का ही सुपरिणाम है। क्योंकि ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना के पूर्व, उपन्यासकार को अपने कथ्य से सम्बद्ध ऐतिहासिक तथ्यों की पर्याप्त गवेषणा और तत्पश्चात उसकी रचना–प्रक्रिया की जटिलताओं को सुलझाते हुए अन्य औपन्यासिक तत्वों और उपादानों की समानुपातिक समायोजना करनी पड़ती है। ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना में उपन्यासकार को प्रायः पूर्व–योजना बनानी और उसी के अनुरूप कला और चरित्रों की अन्विति बैठानी पड़ती है। अस्तु, ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना अपेक्षाकृत अधिक समयसाध्य और श्रमसाध्य होती है। लेकिन, राहुल जी जैसे विलक्षण और विचक्षण प्रतिभा वाले साहित्यकार के लिए इसे इक्कीस दिनों में पूरा कर लेना आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि वे एक ही साथ चार–चार साहित्यिक विधाओं का श्रुतलेखन (डिक्टेशन) कराते थे।

'जय यौधेय' के कथानक का सम्बन्ध भारतीय इतिहास के 350–400 ई0 पूर्व तक की राजनीतिक, सामाजिक स्थिति से है। 'सिंह सेनापति' ऐतिहासिक उपन्यास में जहां लिच्छवि गणराज्य के संघर्ष की गाथा है वहां इसमें यौधेय गण का। इसका कथानायक, सिंह सेनापति का ही प्रतिरूप है। उसमें साहसिकता, आत्मनिर्भरता, दूरदर्शिता और राष्ट्र–प्रेम आदि उदात्त मानवीय गुण सिंह सेनापति के समान ही हैं किन्तु उसके चरित्र में उपन्यासकार ने अपनी विचारधारा का प्रत्यक्षतः इतना आरोपण किया है कि उसकी चारित्रिक स्वाभाविकता कई स्थलों पर अवरूद्ध हो गयी है। वह केवल जात्यभिमान की संकीर्णता, ईश्वरवाद, परलोकवाद, पुनर्जन्मवाद और निर्वाणवाद का विरोध ही नहीं करता वरन् तत्कालीन परिप्रेक्ष्य में साम्यवादी विचारधारा का पोषण करता हुआ राजतंत्र की लोलुपता, स्वार्थपरता आदि का विरोध करता है तथा साम्यवादी गणतंत्र की स्थापना के लिए कृतसंकल्प होता है। फलतः उसके चरित्रोन्मेष में जहां सामाजिक विकृतियों का खण्डन स्वाभाविक प्रतीत होता है वहां साम्यवादी विचारधारा का प्रचार इतिहास–सम्मत सर्वजनविदित सत्य के प्रतिकूल है। यह प्रवृत्ति चरित्रांकन की सीमा तक ही लक्षित नहीं होती, वरन् सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों के चित्रण में भी लक्षित होती है। इसीलिए कुछ लोगों ने यह मान लिया है कि 'लेखक का आदर्श सोवियत संघ का सामाजिक विधान है जिसे वे भारत में स्थापित करने की कामना रखते हैं। 'जय यौधेय' के इस स्पप्न में उपन्यास का मूल उद्देश्य मुखारित हो उठता है जिसके कारण यह कृति समाजवादी चेतना से प्रभावित मानी जा सकती है।'

इस उपन्यास में यात्रा–वृत्तांत के क्रम में कथानायक जय के बौद्ध तीर्थ स्थलों की यात्रा का जो वर्णन है, वे सभी राहुल जी की वैयक्तिक यायावरी जीवन की सार्थक अनुभूतियां हैं। इनके अतिरिक्त चन्द्रगुप्त का राज्यारोहण, यौधेयगण का आक्रमण, सिंह वर्मा और उसकी प्रेयसी वासन्ती की प्रणय लीलाएं आदि वर्णित हैं। यद्यपि यह उपन्यास अपनी औपन्यासिक रंजकता में बड़ा ही आकर्षक बना है तथापि इसमें वर्णित अतिथियों की सेवा में कुमारिकाओं का समर्पण, व्यभिचार और चुम्बन आदि के चित्र सुसंस्कृत नहीं माने जाएंगे। इस सम्बन्ध में डा. नगेन्द्र की यह आपत्ति औचित्यपूर्ण है–'कुछ बातें तो निस्सन्देह आपत्तिजनक हैं–उदाहरण के लिए जिस उदारता से राहुल के पात्र एक दूसरे पर चुम्बनों की बौछारें करते हैं, वह अनैतिक न भी माना जाय परन्तु अभद्र अवश्य है। वास्तव में इसकी उद्भावना का सस्ता उपाय इसमें असंयम के साथ व्यवहृत किया गया है कि उससे अरूचि होने लगती है।' फिर भी, यह उपन्यास राहुल जी की औपन्यासिक कृतियों में विशिष्ट स्थान रखता है। इसमें एक ओर जहां इतिहास और कल्पना का

समन्वयन आकर्षक है वहां दूसरी ओर कथान्विति में पर्याप्त नाटकीयता और कलात्मकता है। राहुल जी ने तत्कालीन राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक स्थितियों के यथार्थ वर्णन में ऐतिहासिकता का सम्यक् ध्यान दिया है। हिमालय से लेकर सिंहल प्रदेश तक की सामाजिक रीति–नीति आचार–व्यवहार, शासन और धार्मिक पद्धतियों आदि का इसमें प्रामाणिक और विश्वसनीय वर्णन है।

हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासों का विषय क्षेत्र प्रायः भारतीय इतिहास तक सीतिक रहा है। संभवतः राहुल जी ही प्रथम उपन्यासकार हैं जिन्होंने भारतीय इतिहास की सीमा से बाहर निकलकर अन्य देशों के ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर ऐतिहासिक उपन्यासों का सृजन करने का सफल प्रयास किया है। परवर्ती काल में कुछ अन्य ऐतिहासिक उपन्यासों के लेखकों का ध्यान विदेश के इतिहास पर अवश्य गया है किन्तु उन्हें वैसी सफलता नहीं मिल सकी है जैसी राहुल जी को मिली है। इस दृष्टि से परवर्ती काल के श्री कृष्णचन्द्र 'भिक्खू' का फ्रांस की अठारहवीं शताब्दी की राज्य क्रांति से सम्बद्ध ऐतिहासिक उपन्यास ईरानी इतिहास 492–529 ई. के कालखण्ड पर आधारित एक उत्कृष्ट उपन्यास है। इसमें समता, प्रेम और बंधुत्व पर अधिष्ठित आदर्श समाज का स्वप्न देखा गया है। लेखकीय विवरणों की अतिशता से उपन्यास इतिहास प्रधान बन गया है। उसने इतिहास के प्रति इतना आग्रह दिखाया है कि वह उपन्यास के परिशिष्ट में ईरान के इतिहास का विस्तृत विवरण देने के व्यामोह से मुक्त नहीं हो सका है। उसका उद्देश्य भी ईरान के विस्तृत इतिहास के विस्तृत पन्ने को पाठकों के सामने रखने का है।

इतिहास के साथ उसने वहां के भौगोलिक ज्ञान के लिए एक मानचित्र भी दिया है। उसने तेइरान (ईरान) में अपने प्रवास काल में वहां के मनुष्यों के साथ नगर, नदियों, पहाड़ों पशुओं आदि के अतीत संदर्भों का गवेषणात्मक अध्ययन कर उन्हें उपन्यास में यथास्थान चित्रित किया है।

'मधुर स्वप्न' के कथानायक तत्कालीन ईरानी सम्राट शाह कवात से चरित्र के पारिध होकर सभी घटनाएं विस्तार ग्रहण करती हैं। वह प्रारम्भ में अमीरों का पक्षधर रहता है किन्तु अन्दर्जगर के सानिध्य में आकर निर्धनों का हितैषी बन जाता है। उसकी इस सहानुभूति और सदाशयता से उसके दरबारी विरोधी बन जाते हैं। वह सिंहासनच्युत हो जाता है और बन्दी भी बना लिया जाता है। उसका भाई जम्भकर गद्दी पर बैठता है किन्तु शाह कवात अपनी पत्नी सम्विक के प्रयासों से बंदीगृह से निकल भागने में सफल हो जाता है। वह अपने बहनोई हेप्ताल के शाह के पास जाता है और उसकी सहायता से पुनः ईरानी का शाह बन जाता है। इसके बाद उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर उत्पन्न संघर्ष की कथा और मज्दक अनुयायियों के षड्यंत्र द्वारा हत्या आदि का विस्तृत वृत्तांत है। इनके बीच ही वहां के सामाजिक सांस्कृतिक आचार–विचार, सामंतशाही, राजतंत्र की दुर्व्यवस्था, साम्यवादी विचारधारा आदि गुम्फित हैं।

'विस्मृत यात्री' बौद्धयात्री नरेन्द्रयश की यात्राओं से सम्बद्ध एक यात्रा प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास है। वस्तुतः इस उपन्यास में नरेन्द्रयश का जीवन–चरित्र ही अभिव्यक्ति है। इस उपन्यास में भी लेखक ने अपने अन्य उपन्यासों की भांति बौद्धधर्म के द्वारा प्रकारान्तर से साम्यवादी विचारधारा का ही प्रचार किया है। उसका विश्वास है कि संसार के समस्त संत्रास और शोषण से मुक्ति पाने के लिए आर्थिक वैषम्य को मिटाना अनिवार्य है।

इस यात्रापरक उपन्यास में लेखक ने नरेन्द्र के जीवन पर सम्यक डाला है। कथानायक नरेन्द्रयश अपनी प्रेमिका भद्रा के असफल प्रेम से बौद्धधर्म स्वीकार कर लेता है। वह बौद्धधर्म के

प्रचार में कपिशा, गान्धार, कश्मीर, कौशाम्बी, श्रावस्ती, लुम्बिनी, कुशीनगर, सिंहलद्वीप और चीन की यात्रा करता है। अपने इस यात्रा क्रम में वह विभिन्न नगर, ग्रामों के निवासियों के निकट सम्पर्क में आता है। उसे अनेकानेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है किन्तु वह अपने साहस और अदम्य इच्छाशक्ति से विचलित नहीं होता। अंततः जब वह चीन में पहुंचता है तब वहां का छी–वंशीय सम्राट उसका स्वागत सत्कार करता है। चीन में रहकर वह बौद्धधर्म का प्रचार–प्रसार करता है और वहीं इकहत्तर वर्ष की आयु में महानिर्वाण प्राप्त करता है। इस उपन्यास की सृजन प्रेरणा पर प्रकाश डालते हुए राहुल जी ने स्पष्ट लिखा है 'इतिहास का विद्यार्थी और जर्यटक होने के कारण 'विस्मृत यात्री' जैसे उपन्यास के लिखने के लिए मेरा ध्यान जाना स्वाभाविक ही है। नरेन्द्रयश कोई कल्पित पात्र नहीं हैं। वह हमारे देश के अब पश्चिमी पाकिस्तान के स्वाद की भूमि में सन् 592 ई0 में पैदा हुए थे।'

अपने इस कथन के आधार पर उन्होंने अपने यात्रानुभवों को कथानायक नरेन्द्रयश के माध्यम से विस्तार दिया है। इसका संकेत उपन्यास के प्रारंभिक अंशों से ही स्पष्ट है। उसके चरित्र से यह स्पष्ट लक्षित है कि उसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य यात्रा और बौद्धधर्म का प्रचार है। साथ ही, यात्राओं से मिलनेवाली कठिनाईयों ने उसके जीवन को अतिशय कठोर और कर्मठ बना दिया है। वह अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व के माध्यम से सहज ही लोगों को आकृष्ट कर लेता है। जहां उसका व्यक्तित्व आकर्षक और भव्य है वहां उसके आन्तरिक चरित्र में भी ऐसे दुर्लभ गुण हैं जिससे सभी प्रभावित हो जाते हैं। वह अपने सुमधुर कंठ से लोगों को संगीत सुनाता है, रोगियों, अभावग्रस्त जनों, भूखों और अनाथों की निःस्वार्थ सेवा करता है। उसके चरित्र के अतिरिक्त बृद्धिल, गौतम, प्रज्ञारूचि, उपशून्य, शान्तिल, लेवतक और सुमन आदि के चरित्र भी औपन्यासिक संरचना विधान में महत्तवपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

'दिवोदास' एक लघु ऐतिहासिक उपन्यास है, जिसमें 1220 ई0 पूर्व से सम्बद्ध काल खण्ड के भारतीय जीवन को चित्रित किया गया है। इस लघु उपन्यास में लेखक ने ऋग्वेद की ऋचाओं को यथास्थान प्रस्तुत करते हुए राहुल जी ने तत्कालीन भारत के यथार्थ स्वरूप को उद्घाटित किया है।

यद्यपि उपन्यास का प्रारम्भ सतलुज, विपाशा (व्यास), परूष्णी (रावी), असिक्नी (चिनाव), वितस्ता (जेलहम) और सिन्ध नदी के तदीय प्रदेशों के ऐतिहासिक और भौगोलिक शुष्क विवरणात्मक वर्णनों से होता है तथापि यह विवरण कथानायक दिवोदास के शौर्यशाली और पराक्रमी चरित्र के उत्कर्ष के लिए एक आवश्यक पीठिका बनता है। इसमें न केवल पुरू, यदु, द्रुहा और अनु–आर्यों से विकसित पच्चीस कुलों के विस्तार के इतिहास से सामंतवाद के विकास पर प्रकाश डाला गया है वरन् तत्कालीन सामान्य जनों, पणियों और वनचरों (निषादों, किरातों) के जीवन को भी साकार किया गया है। इस क्रम में सप्तसिन्धु के महाबली पुरूकुत्स की पत्नी पुरूकुत्सानी आदि कथाएं उपेक्षणीय नहीं हैं किन्तु, उपन्यासकार का उद्देश्य दिवोदास के चरित्र पर ही केन्द्रीत है। उसके बाल्यकाल से मृत्युपर्यन्त के जीवन को उभारते हुए उसने उसके साहस, शौर्य, पराक्रम और दूरदर्शिता आदि चारित्रिक गुणों को व्यक्त किया है। बाल्यकाल में वह आश्वासन (अश्वमेला) में अपने अपूर्व शौर्य का प्रदर्शन कर सबको अभिभूत कर लेता है। जैसे–जैसे उसकी उम्र बढ़ती जाती है, वह अपने युद्ध–कौशल, अस्त्र संचालन तथा अश्वारोहण में उत्तरोत्तर विकास करता जाता है। उसके विकास में उसके गुरू भारद्वाज का योगदान भी अर्जित किया और वह अपने सहपाठियों में भी अग्रणी रहा। आश्रम के सहपाठी श्यालपुत्र, भुज्यु, तौम्य, कुत्स, आयुनेम,

पुरूकुत्स, कुरूविंद से उसकी गहरी मित्रता थी जो जीवनपर्यन्त अक्षुण्ण रही। पिता की मृत्यु के पश्चात जब वह राजा बनता है। तब सप्तसिन्धु से पणियों और किरातों को निकालने के लिए कृतसंकल्प होता है। भुज्यु आदि सेनापतियों की सहायता से पणियों को समाप्त कर समस्त पश्चिमी सिन्धु प्रदेश पर अपना अधिकार जमा लेता है। इसके बाद वह किरातों पर आक्रमण करता है। किरातों के दुर्दान्त सरकार शम्बर के साथ उसका लोमहर्षक युद्ध होता है। अन्ततः शम्बर मारा जाता है और दिवोदास सम्पूर्ण सिन्धप्रदेश का एकच्छत्र राजा बन जाता है।

'दिवोदास' लघु ऐतिहासिक उपन्यास होकर भी ऋग्वेदकालीन भारत के सम्पूर्ण चित्र को प्रस्तुत करने में सफल है। तत्कालीन आर्यों–अनार्यों के आचार–विचार, खान–पान, रीति–नीति, स्त्री–पुरूष सम्बन्ध, पशु–पालन, कृषि–कार्य, आखेट, धार्मिक कृत्य आदि पर व्यापक रूप से प्रकाश डाला गया है। पुरूष समुदाय के साथ तत्कालीन नारियों के जीवन पर भी लेखक ने विस्तार से विचार किया है। 'सरस्वती–तीर' परिच्छेद के अंतर्गत पुरूकुत्सानी और उसकी ननद पौरवी के सम्वाद क्रम में नारियों के वाह्याभ्यन्तर स्वरूप को कलात्मकता से चित्रित किया गया है। तत्कालीन नारियों में शौर्य और सौन्दर्य का अद्भुत मिश्रण था। आर्य नारियां पुरूषों की तरह ही घुड़सवारी में दक्ष थीं और शत्रु का सामना भी निर्भिकता से कर सकती थीं। यंत्र–तंत्र नारी सौन्दर्य का वर्णन भी लेखक ने रससिक्त भाषा में किया है, 'केशों को देखें या तुंग नासिका को, नीले नेत्रों को देखें या लाल अधरों को, चन्द्रखण्ड जैसे कपोलों पर दृष्टिपात करें या उन्नत श्वेत ललाट पर, शक्तिसम्पन्न सुघर बाहुलताओं को देखें या उनकी कोमल पतली अंगुलियों और आरक्त करतल को।'

एतदर्थ 'दिवोदास' ऐतिहासिक उपन्यास में कथा और चरित्र के समवाय से ऋग्वेदकालीन जीवन के सभी पक्षों को कलात्मकता से ध्वनित किया गया है। इससे लेखक के तत्कालीन भारत की सभ्यता और संस्कृति से सूक्ष्मातिसूक्ष्म तत्त्वों की बहुज्ञता लक्षित है। उसने कथा संरचना में तत्कालीन जन–जीवन और संस्कृति को इस रूप में अन्वित किया है कि वह यथार्थ और जीवन्त बन गया है।

यद्यपि राहुल जी के ऐतिहासिक उपन्यासों में कथातत्त्व के अन्तर्गत पर्याप्त, तारतम्य, संघर्ष, गतिविस्तार और रमणीयता के साथ रसमयता है तथापि कहीं–कहीं अनावश्यक वर्णन विस्तार से उसमें औत्सुक्य और गतिशीलता का अभाव आ गया है। पुनः इतिहास तत्त्व की प्रमाणिकता के आग्रह में तिथि, मास, सन्, सम्वत् के उल्लेख भी कथा की रंजकता में बाधक बन गये हैं। इस दृष्टि से डा0 जगदीश गुप्त का कथन एक सीमा तक औचित्यपूर्ण है, 'राहुल जी में उपन्यासकार की अपेक्षा इतिहासज्ञ और बहुभाषाविज्ञ के तत्त्व अधिक प्रधान और शक्तिशाली हैं, फलतः उपन्यास बोझीला है। ऐतिहासिक तथ्यों के समाहित करने के प्रयास में कथा की गति शिथिल हो गयी है और कहीं–कहीं उसकी आनुपातिकता एवं स्वाभाविकता को भी आघात पहुंचा है।'

लेकिन, कथा के इस अभाव की क्षतिपूर्ति उन्होंने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में सशक्त चरित्रों की परिकल्पना से की है। उनके चरित्रों में आत्मपरकता अधिक है। उनमें इतिहास के साथ जीवनी साहित्य के तत्त्व अधिक व्यंजित हैं। यही कारण है कि उनके पात्रों में यथार्थ जीवन प्रतीति के साथ उनके व्यक्तित्व और क्रियाकलापों में अपेक्षाकृत अधिक संतुलन है। उन्होंने पात्रों के आन्तरिक गुणों और अन्तवृत्तियों पर विशेष ध्यान दिया है जिससे मानवीय संवेदना को वे सहज ही उद्वेलित करते हैं। उन्होंने वर्णनों, संकेतों, संवादों आदि के द्वारा अपने पात्रों के घात–प्रतिघात और क्रियाकलाप को व्यक्त किया। चरित्रांकन क्रम में युग विशेष को दृष्टि में रखते हुए उनके अंतर्मन

को चित्रित करने का प्रयास किया है। फलतः उनके चरित्र इतिहास प्रसिद्ध व्यक्तित्व न होकर भी इतिहास सिद्ध प्रतीत होते हैं। पात्रों के वाह्य चित्रण में इतिहासानुमोदित तथ्यों पर जहां उनका ध्यान रहा है वहां उनके मानसिक उद्वेगों और संवेगों का चित्रण मनोवैज्ञानिक धरातल पर हुआ है। अतीत जीवन के चित्रांकन में उनका प्रयास चिरन्तन मानव मूल्यों का अन्वेषण ही रहा है।

ऐतिहासिक वातातरण का नियमन ऐतिहासिक उपन्यासों की प्रथम अनिवार्यता है। उसकी सारी औपन्यासिक संरचना की सफलता इसी पर निर्भर होती है। जब तक उपन्यासकार अतीत की अतीतता को साकार नहीं कर पाता, तब तक अउसकी सार्थकता सिद्ध नहीं होती। वह इसी के माध्यम से अपने पाठकों की मनःस्थिति को वर्तमान से हटाकर अतीत की ओर उन्मुख करता है। राहुल जी ने इस तथ्य पर विशेष ध्यान दिया है और इसके लिए उन्होंने उपस्थापित कथा के अंतर्गत सम्बद्ध युग की रीति नीति, आचार विचार, सामाजिक मनोदशा, भौगोलिक स्थिति आदि की यथार्थता पर विशेष बल दिया है। राहुल जी के उपन्यासों में अतिशय ऐतिहासिक आग्रह के कारण ही उनकी वस्तुयोजना में कहीं कहीं शिथिलता आ गयी है। इसी आग्रह के कारण कई स्थलों पर इतिहास तत्व, वस्तुयोजना और पात्रों की अन्विति से व्यंजित न होकर स्वतंत्र प्रतीत होते हैं।

ऐतिहासिक वातातरण के निर्माण में ऐतिहासिक उपन्यासों की भाषा शैली की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। भाषा की शब्द योजना, वातातरण, वस्तु और पात्रों की अतीतता के भवन में सहायिका होती है। राहुल जी ने इस तथ्य पर विशेष ध्यान देते हुए भाषिक प्रयोग में बड़ी सावधानी और सतर्कता बरती है। वे बहुभाषाविद् होने के साथ ऐतिहासिक भाषाविज्ञान के उद्भट विद्वान थे। उनके ऐतिहासिक उपन्यासों की अतीत शब्दावली बड़ी व्यंजक है। उन्होंने इस क्रम में नगर, नदी, पहाड़ों, के साथ वस्तुओं, सम्बन्धों, उपाधियों आदि के प्राचीन नामों का भी उल्लेख किया है, यथा हिरितावली (हरियाणा), गोपगिरी (ग्वालियर), पुरूषपुर(पेशावर), गन्धमान(हिन्दूकुश), कपिशा (काबुल), विपाश (व्यास), परूष्णी (रावी), वितस्ता (जेलहम), अश्वत्थ (पीपल), खदिर (खैर), हरिद्रु (हल्दी), किंशुक (पलाश), अपूय (रोटी), गोत्र(गोष्ठ), कपर्द (वेणी), समन (मेले), आपश (मथटीका), गर्गरा(नगाड़ा), अनास (चिपटी नाकवाला), शलभ(टिड्डी), अधिसपण(चक्की), उलूखल(औखल), ग्रावा(शिलापट्टा), मेथा मयूख(खूंटी), तारोतल(चर्म वेष्टि प्याले), कुचक(सन्दूक), शंकू(कील), यवाशिर(जौ की खीर), चूस(पूस), आदि शब्द द्रष्टव्य हैं। ये शब्द ऐतिहासिक बिम्बात्मक अनुभूति प्रदान करते हैं।

समग्रतः राहुल जी के ऐतिहासिक उपन्यासों में उनकी उद्देश्यपरकता के कारण औपन्यासिक कल्पना की कतिपय विसंगतियां अवश्य हैं किन्तु इतिहास तत्व के यथार्थपरक सम्यक निर्वाह से अतीत संस्कृति, समाज और जीवन को चित्रित करने में उन्हें प्रभूत सफलता मिली है। उनके ऐतिहासिक उपन्यासों में प्राकृतिक रंगों, समृद्ध सांस्कृतिक सम्पदाओं और लोक समुदाय के वैविध्यपूर्ण जीवन प्रतिमानों का सम्यक निर्वाह हुआ है। ऐतिहासिक हिन्दी उपन्यासों की विकास यात्रा में उनके ऐतिहासिक उपन्यासों की उद्भावनाएं और उपलब्धियां नितांत मौलिक और श्लाघ्य हैं।

सन्दर्भ सूची

- संस्कृति पुरूष–राहुल जी–श्री रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'
- राहुलःएक बेचैन जिन्दगी –डॉ0 विद्यानिवास मिश्र
- राहुल की इतिहास–दृष्टि–डा0 विशम्भरनाथ उपाध्याय

- ❖ महापण्डित राहुल सांकृत्यायन जन्मशती अंकन 1993 सम्मेलन–4 –हिन्दी साहित्य सम्मेलन पत्रिका, इलाहाबाद
- ❖ साहित्य सम्मेलन पत्रिका–सम्पादक – डॉ. प्रभात शास्त्री
- ❖ हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
- ❖ हिन्दी साहित्य का वस्तुपरख इतिहास – डॉ0 राम प्रसाद मिश्र

Copyright © 2016, Dr. R.P.Verma. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.